Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

झारखंड लोक सेवा आयोग (JPSC)

पद्य खंड

(आलोचना एवं व्याख्या)

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: JHM03

झारखंड लोक सेवा आयोग (JPSC)

पद्य खंड

(आलोचना एवं व्याख्या)

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 8750187501, 011-47532596
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

JPSC DLP विषय सूची (Contents)

1.	**कबीर ग्रंथावली (कबीर)**	**7-39**
1.1	कबीर का मूल व्यक्तित्व	7
1.2	कबीर का दर्शन	9
1.3	कबीर के दर्शन पर विभिन्न दर्शनों का प्रभाव	10
1.4	कबीर के काव्य में योग और भक्ति का संश्लेषण	12
1.5	कबीर की भक्ति भावना का स्वरूप	14
1.6	कबीर की भक्ति: स्वदेशी या विदेशी	16
1.7	कबीर का रहस्यवाद	18
1.8	कबीर की काव्य भाषा	19
1.9	कबीर की उलटबाँसी	21
1.10	गुरुदेव को अंग, विरह को अंग तथा सुमिरन को अंग	22
1.11	कबीर के बीजक में शामिल प्रमुख काव्यरूप (साखी, सबद, रमैनी इत्यादि)	24
1.12	व्याख्या प्रारूप (कबीर)	27
1.13	कबीर (व्याख्या के लिये महत्वपूर्ण दोहे)	29
2.	**भ्रमरगीत सार (सूरदास)**	**40-78**
2.1	सूरदास और उनकी प्रेम पद्धति	40
2.2	भ्रमरगीत : वियोग शृंगार	42
2.3	सूरदास के काव्य में सामाजिक पक्ष	45
2.4	सूरदास की भक्ति भावना का दार्शनिक आधार	47
2.5	सूर की कविता में वक्रता और वाग्विदग्धता	49
2.6	सूर की अलंकार योजना	50
2.7	सूरदास की भाषा	52
2.8	भ्रमरगीत की बिंब योजना	54
2.9	शिल्प के अन्य पक्ष	55
2.10	भ्रमर-गीत : उपालम्भ काव्य के रूप में	56

2.11	'भ्रमरगीत' में प्रकृति वर्णन	57
2.12	भ्रमरगीत सार में सूर की मौलिक उद्‌भावनाएँ	59
2.13	भ्रमरगीत की सूर की परवर्ती परंपरा	60
2.14	व्याख्या प्रारूप (सूरदास)	61
2.15	सूरदास (व्याख्या के लिये महत्त्वपूर्ण पद)	63
3.	**अयोध्याकांड (रामचरित मानस)**	**79-105**
3.1	तुलसी की भक्ति पद्धति	79
3.2	तुलसी की भक्ति-भावना का लोकमंगलकारी पक्ष	81
3.3	तुलसी की सामाजिक चेतना	82
3.4	तुलसी के काव्य में कलियुग व रामराज्य की धारणाएँ	86
3.5	तुलसी की समन्वय चेतना	88
3.6	तुलसीदास की काव्य कला या शिल्प पक्ष	91
3.7	रामचरितमानस का महाकाव्यत्व	94
3.8	अयोध्याकांड	96
3.9	व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण पद	97
4.	**बिहारी रत्नाकर (बिहारी)**	**106-120**
4.1	बिहारी के काव्य मेंशृंगार पक्ष	106
4.2	बिहारी की भक्ति भावना	107
4.3	बिहारी की सामाजिक चेतना	107
4.4	बिहारी का काव्य शिल्प	109
4.5	सतसई परंपरा में 'बिहारी सतसई' का स्थान	112
4.6	व्याख्या अभ्यास (बिहारी)	113
4.7	व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण दोहे	114
5.	**कामायनी (जयशंकर प्रसाद)**	**121-145**
5.1	कामायनी: कथासार	121
5.2	कामायनी का दर्शन	124
5.3	कामायनी का रस निर्णय/अंगीरस	126
5.4	कामायनी की प्रतीकात्मकता/रूपक-तत्व	127

5.5	कामायनी: अन्योक्ति या समासोक्ति	128
5.6	कामायनी: मानव मन एवं मानवता के विकास की कहानी	130
5.7	कामायनी में मिथक, इतिहास और कल्पना का प्रयोग	131
5.8	कामायनी का महाकाव्यत्व	132
5.9	कामायनी में श्रद्धा के चरित्र	134
5.10	कामायनी: एक असफल कृति	136
5.11	कामायनी के समरसता संदेश की प्रासंगिकता	137
5.12	कामायनी में प्रकृति वर्णन तथा प्रकृति के कोमल व प्रलयंकारी रूप	139
5.13	कामायनी (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण काव्यांश)	140
6.	**राम की शक्तिपूजा, (निराला)**	**146-188**
6.1	राम की शक्तिपूजा : कविता	146
6.2	राम की शक्तिपूजा की केंद्रीय संवेदना 'सीता की मुक्ति' है	154
6.3	राम की शक्तिपूजा की केन्द्रीय संवेदना 'शक्ति की मौलिक कल्पना' है	156
6.4	राम की शक्तिपूजा में शक्ति की मौलिक कल्पना क्या है?	158
6.5	राम की शक्तिपूजा व राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन	160
6.6	निराला का आत्मसंघर्ष और राम की शक्ति पूजा	162
6.7	'वह एक और मन रहा राम का जो न थका'- 'शक्तिपूजा' की केंद्रीय संवेदना है	164
6.8	राम की शक्तिपूजा में सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म का शाश्वत संघर्ष	165
6.9	राम की शक्तिपूजा के आधार पर निराला की भक्ति भावना	166
6.10	राम की शक्तिपूजा में कवि की कल्पनाओं की भूमिका	167
6.11	राम की शक्तिपूजा: महाकाव्यात्मक औदात्य से संपन्न लंबी कविता	168
6.12	राम की शक्तिपूजा की भाषा	170
6.13	राम की शक्ति पूजा में नाटकीयता	171
6.14	निराला की चरित्र-चित्रण कला	174
6.15	छायावादी विशेषताओं के संदर्भ में राम की शक्ति पूजा	175
6.16	राम की शक्तिपूजा: 'शक्ति काव्य का प्रतिमान'	177

6.17 व्याख्या अभ्यास: राम की शक्तिपूजा 179

6.18 राम की शक्तिपूजा (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण काव्यांश) 181

7. कितनी नावों में कितनी बार (अज्ञेय) 189-190

8. कुरुक्षेत्र (रामधारी सिंह दिनकर) पहला सर्ग 191-203

8.1 दिनकर: एक परिचय 191

8.2 कुरुक्षेत्र का युद्ध दर्शन 191

8.3 कुरुक्षेत्र में मानववादी विचार 193

8.4 कुरुक्षेत्र का काव्यरूप 194

8.5 कुरुक्षेत्र (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण काव्यांश) 196

9. मुक्तिबोध- अंधेरे में (भाग-1) 204-208

9.1 'अंधेरे में' व मुक्तिबोध 206

अध्याय
1

कबीर ग्रंथावली (कबीर)

1.1 कबीर का मूल व्यक्तित्व

कबीर का व्यक्तित्व बहुआयामी है और इसी कारण उनकी समीक्षा करते हुए इस प्रश्न से जूझना पड़ता है कि कबीर के व्यक्तित्व के सभी पक्षों में पारस्परिक संबंध क्या है? आलोचकों का एक वर्ग उन्हें 'संत' मानता है और दावा करता है कि *"कबीर स्वभाव से संत, प्रकृति से उपदेशक और ठोक-पीट कर कवि हो गए हैं।"* दूसरी ओर, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रभृति आलोचक उन्हें मूलतः भक्त मानते हैं तथा शेष सभी पक्षों को भक्त व्यक्तित्व की ही छाया बताते हैं। इस संदर्भ में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठता है कि कबीर का मूल व्यक्तित्व कवि का है, समाज सुधारक का है या फिर भक्त का है?

जहाँ तक कबीर के समाज सुधारक होने का प्रश्न है, यह निर्विवाद सत्य है कि वे बुद्ध, गांधी, अम्बेडकर इत्यादि क्रांतिकारी समाज सुधारकों की परम्परा में शामिल होते हैं। एक महान समाज सुधारक की मूल पहचान यह है कि अपने युग की विसंगतियों की पहचान करे, एक मौलिक व समयानुकूल जीवन दृष्टि प्रस्तावित करे और इस जीवन दृष्टि को स्थापित करने के लिए हर प्रकार के भय और लालच से मुक्त होकर दृढ़तापूर्वक संघर्ष करे। कबीर के व्यक्तित्व का विश्लेषण करें तो हम समझ सकते हैं कि वे जिस सामंतवादी युग में थे, वह सामाजिक दृष्टि से अपकर्ष का काल था। विलासिता जैसे मूल्य समाज में फैले हुए थे। नारी को भोग की वस्तु माना जाता था। वर्णव्यवस्था और साम्प्रदायिकता ने मानव समाज को खंडित किया हुआ था। धर्म का आडम्बरकारी रूप वास्तविक धार्मिकता को निगल चुका था और भाषा से लेकर जीवन शैली तक एक प्रकार का आभिजात्य उच्च वर्गों की मानसिकता में बैठा हुआ था। ऐसे समय में कबीर ने मानव मात्र की एकता का सवाल उठाया और स्पष्ट घोषणा की कि *"साईं के सब जीव हैं, कीरी कुंजर दोय।"* वे समाज के प्रति अति गहन संवेदनशीलता से भरे रहे क्योंकि 'सुखिया' संसार खाता और सोता रहा जबकि संसार की वास्तविकता समझकर 'दुखिया' कबीर जागते और रोते रहे। यह संवेदनशीलता निष्क्रिय नहीं थी बल्कि इतनी ज्यादा दृढ़ता और आत्मविश्वास से भरी थी कि बेहतर समाज के निर्माण के लिए कबीर अपना घर फूँकने को पूर्णतः तैयार थे-

"हम घर जारा आपना, लिया मुराड़ा हाथ।
अब घर जारौं तासु का, जो चलै हमारे साथ।।"

समाज के प्रति यही दृष्टिकोण वर्णव्यवस्था, साम्प्रदायिकता, भाषाई आभिजात्य और धार्मिक आडम्बरों के कठोर खंडन में साफ दिखाई पड़ता है। स्पष्ट है कि कबीर महान समाज सुधारक थे।

किन्तु, वे जितने महान समाज सुधारक थे, उतने ही महान कवि भी थे। यह ठीक है कि उन्होंने सचेत होकर या प्रतिज्ञापूर्वक अपनी कविताएँ नहीं लिखीं और कहा भी कि *"जिन तुम जान्यौ गीति हैं, वह निज ब्रह्म विचार।"* उन्होंने तो यहाँ तक माना कि *"मसि कागद छवो नहीं, कलम गहि नहिं हाथ।"* इसलिए यदि हम काव्यशास्त्र के पारम्परिक प्रतिमानों की दृष्टि से देखें तो संभवतः उन्हें महान कवि मानने में हिचकिचाहट हो सकती है किन्तु यदि हम यह मानें कि कविता के अनुसार प्रतिमान होना चाहिए न कि प्रतिमानों के अनुसार कविता, तो हम पाते हैं कि कबीर की कविताएँ किसी महाकवि की ही कविताएँ हैं। हठयोग की शब्दावली और उपदेशात्मकता से भरे प्रसंगों को यदि कुछ क्षण के लिए अलग रख दें तो उनकी समाज संबंधी कविताएँ और ईश्वर मिलन संबंधी कविताएँ किसी भी सचेत और सजग कवि के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकती हैं। सामाजिक कविताओं में उनकी व्यंग्य क्षमता उन्हें हिन्दी साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान करती है तो ईश्वर मिलन से संबंधित कविताओं की मधुरता और भावुकता बिहारी जैसे श्रृंगारिक कवियों की कविताओं पर भी भारी पड़ती है। शिल्प की दृष्टि से देखें तो वे 'वाणी के डिक्टेटर' तो हैं ही, अन्य काव्यशास्त्रीय उपादानों के प्रति गहरी उदासीनता बरतने के बाद भी उनका स्वाभाविक प्रयोग अत्यंत खूबसूरती से करते हैं।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. "कबीर की कविता "अस्वीकार" के साथ-साथ स्वीकार की भी कविता है।" इस कथन के संदर्भ में कबीर काव्य का विश्लेषण कीजिये।
2. 'भक्ति-आन्दोलन का जन-साधारण पर जितना व्यापक प्रभाव हुआ, उतना किसी अन्य आन्दोलन का नहीं' इस कथन की सार्थकता पर विचार करते हुए कबीर की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
3. क्या कबीर ने अनीश्वरत्व के निकट पहुँच चुके भारतीय जनमानस को निर्गुण ब्रह्म की भक्ति की ओर प्रवृत्त होने की उत्तेजना प्रदान की? तर्कसम्मत उत्तर दीजिये।
4. "कबीर जनता के कवि थे और जनता के प्रति उनके हृदय में असीम करुणा और अनुराग का भाव था।" इस कथन की सोदाहरण समीक्षा कीजिये।
5. "कबीर की कविता में प्रेम केवल संवेदना ही नहीं, अवधारणा के रूप में भी है। वह केवल राम के विरह का ही नहीं, कवि के सामाजिक विवेक का भी प्रतिमान है"- इस कथन की पुष्टि कीजिये।
6. "कबीर की भाषा सधुक्कड़ी थी"- इस कथन के औचित्य पर सोदाहरण विचार कीजिये।
7. "सामंती समाज की जड़ता को तोड़ने का जैसा प्रयास कबीर ने किया वैसा प्रयास कोई दूसरा नहीं कर सका।" - इस कथन के आधार पर कबीर के कृतित्व का सोदाहरण मूल्यांकन कीजिये।
8. वर्तमान सामाजिक संदर्भों में कबीर के काव्य की प्रासंगिकता पर विचार कीजिये।
9. "कबीर शास्त्रीय ज्ञान की अपेक्षा अनुभव-ज्ञान को अधिक महत्त्व देते थे।" इस मत की समीक्षा कीजिये।

अध्याय
2

भ्रमरगीत सार (सूरदास)

2.1 सूरदास और उनकी प्रेम पद्धति

सूरदास प्रेम के कवि हैं। सूरकाव्य का मूल आधार शृंगार और वात्सल्य हैं। उन्होंने बालक कृष्ण की चंचल क्रीड़ाओं और युवा कृष्ण के शृंगार के सजीले चित्रों की एक पूरी प्रदर्शनी ही संजो दी है। निस्संदेह उन्होंने अपने आराध्य श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व के कतिपय विशिष्ट पक्षों के भीतर ही झाँका है किन्तु इन दोनों पक्षों में से कुछ भी ऐसा नहीं रहा जो उनकी कविता का हिस्सा न बना हो। सूरदास भावनाओं के कवि थे, उन्हें मानवीय भावों की पूरी और सही पहचान थी।

सूरदास के प्रेम-पक्ष के अन्तर्गत वात्सल्य, सख्य और दाम्पत्य तीनों भावों के संयोगात्मक तथा वियोगात्मक वर्णनों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। भगवद्विषयक रति अर्थात् भक्ति के संदर्भ में ध्यातव्य है कि सूर साहित्य में दोनों भावों के आलंबन कृष्ण ही हैं, अतः उनकी भक्ति व प्रेम में कोई तात्विक भेद नहीं है।

(क) वात्सल्यः सूरदास वात्सल्य क्षेत्र के सम्राट हैं। उनके बाल चित्रण में छोटी से छोटी बात भी नहीं छूटी है। उन्होंने कृष्ण की बालसुलभ चेष्टाओं का सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरीक्षण किया है। शृंगार वर्णन की भांति उनका वात्सल्य वर्णन भी सांगोपांग है। वर्णन की स्वाभाविकता उनके वात्सल्य पक्ष की विशेषता है। उनसे पूर्व वात्सल्य केवल एक भाव था किन्तु सूरदास ने वात्सल्य को रस की कोटि प्रदान करवाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

सूर के संयोग वात्सल्य के प्रमुख अंग निम्नलिखित हैं-

(i) रूप वर्णन
(ii) क्रीड़ा, चेष्टा, मुद्राओं का वर्णन
(iii) बाल स्वभाव का वर्णन
(iv) संस्कारों का वर्णन
(v) मातृहृदय का प्रकाशन

बाल चेष्टा के स्वाभाविक मनोहर चित्रों का इतना बड़ा भण्डार और कहीं नहीं है जितना सूरसागर में है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

"सोभित कर नवनीत लिए।
घुटरुनि चलत रेनु तन मंडित, मुख दधि लेप किये।"
"मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी?
किती बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी।"

सूर ने वात्सल्य के वियोग पक्ष के अन्तर्गत यशोदा और नन्द की मानसिक पीड़ा का विवेचन किया है। सूर-सागर में वियोग का आरम्भ ही वात्सल्य के वियोग-पक्ष से हुआ है। श्रीकृष्ण जब अक्रूर के साथ मथुरा चले गये और अतिशय प्रतीक्षा के बाद भी नहीं आए तो यशोदा दुखित मन से अपने पति नंद को फटकारती हैं-

"नंद ब्रज लीजै ठोकि बजाय।
देहु बिदा मिलि जाहिं मधुपुरी जहँ गोकुल के राय।"
"यद्यपि मन समुझावत लोग।
सूल होत नवनीत देखि मेरे, मोहन के मुख जोग।"

मातृ हृदय का प्रकाशन सूर ने जिस तन्मयता से किया है, यह विस्मित कर देने वाली है। आलोचक मानते हैं कि सूर स्वयं 'यशोदा' बनकर मातृ हृदय का प्रकाशन कर रहे हैं। आचार्य शुक्ल कहते हैं- *"ऐसा लगता है कि यशोदा, यशोदा न रहीं मानो सूर हो गईं और सूर, सूर न रहे, यशोदा हो गए।"* आचार्य द्विवेदी भी सूर के इस गुण पर मोहित होकर कहते हैं- *"हम बाल-लीला से भी बढ़कर जो गुण सूरदास में पाते हैं, वह है उनका मातृ-हृदय-चित्रण। माता के कोमल हृदय में पैठने की अद्भुत-शक्ति है इस अन्धे में।"*

अध्याय
3

अयोध्याकांड (रामचरित मानस)

3.1 तुलसी की भक्ति पद्धति

तुलसीदास राम भक्ति काव्यधारा के सर्वाधिक प्रतिष्ठित कवि हैं। इनकी भक्ति पद्धति को निम्नलिखित विश्लेषण से समझा जा सकता है-

(क) दास्य भक्तिः तुलसी नवधा भक्ति में से जिसे मूलतः स्वीकार करते हैं, वह है दास्य भक्ति। दास्य भक्ति वह है जिसमें ईश्वर अत्यंत विराट व सर्वशक्तिमान माना जाता है एवं भक्त में लघुता या हीनता का भाव होता है। इस पद्धति में राम श्रद्धेय हैं, प्रेमी नहीं। इसी कारण भक्त में लघुता का बोध होना स्वाभाविक है-

"राम सों बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो।
राम सों खरो है कौन, मोसों कौन खोटो।।"

नवधा भक्ति के अन्तर्गत आने वाले वे सभी स्वर तुलसी के यहाँ मिलते हैं जो दास्य भक्ति के अनुकूल हों। उदाहरण के लिए-

श्रवण-

"जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना,
श्रवन रंध्र अहिभवन समाना।।"

कीर्तन-

"जो नहिं करै राम गुन गाना,
जीह सो दादुर जीह समाना।।"

आत्मनिवेदन-

"एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
एक राम घनस्याम हित, चातक तुलसीदास।।"

इस प्रकार तुलसी नवधा भक्ति के विविध रूपों को समेटते हुए दास्य भक्ति को केन्द्र में रखते हैं।

(ख) सगुण भक्ति बनाम निर्गुण भक्तिः सगुण व निर्गुण का विवाद तुलसी के समय का एक ज्वलंत विवाद है जिससे बचकर कोई भक्त नहीं रह पाया। तुलसी सगुण भक्त हैं, इसलिये मानते हैं कि जिस राम की वे बात कर रहे हैं, वह दशरथ पुत्र ही हैं। कबीर ने ज़ोर देकर कहा था कि लोग दशरथ पुत्र को पूजते हैं किंतु 'राम' शब्द का वास्तविक मर्म नहीं समझते। तुलसी ने बलपूर्वक जवाब दिया कि उनके राम दशरथ के पुत्र ही हैं-

"जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथ सुत भगत हित, कोसलपति भगवान।।"

किंतु, तुलसी सगुण राम के भक्त होते हुए भी समन्वय चेतना से युक्त होने के कारण सगुण व निर्गुण को परस्पर विरोधी नहीं मानते। वे मानते हैं कि भक्ति सर्वजनसुलभ मार्ग है और भक्त किसी की भी पूजा करे, वह मूलतः एक ही ईश्वर की पूजा करता है। वे लिखते हैं -

"अगुनहिं-सगुनहिं नहिं कछु भेदा,
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।"
"अगुन-सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा,
अकथ अगाध अनादि अनूपा।।"

अन्ततः वे निर्गुण व सगुण भक्ति का आंतरिक सम्बंध अवतारवादी धारणा से स्पष्ट करते हैं। वे स्वीकारते हैं कि मूलतः ब्रह्म निर्गुण ही हैं किंतु सज्जनों की पीड़ा हरने के लिए वे अवतार का रूप लेकर पृथ्वी पर आते हैं-

अध्याय
4

बिहारी रत्नाकर (बिहारी)

4.1 बिहारी के काव्य में शृंगार पक्ष

बिहारी मुख्यत: शृंगार के कवि हैं और इनके अधिकांश छंदों में शृंगार के संयोग व वियोग पक्ष बिखरे हुए हैं। इनके शृंगार की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

1. बिहारी के शृंगार वर्णन में 'देह' की केंद्रीय भूमिका है। रीतिकाल का दरबारी माहौल ऐसे शृंगार की ही परिस्थितियाँ तैयार करता है जिसमें देह की चमक दरबारी रसिकों को आनंदित कर सके। यही कारण है कि बिहारी की कविताओं में बार-बार ऐसे उपमान आते हैं जिनके माध्यम से नायिका के शरीर की चमक का वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण तरीके से किया गया है। उदाहरण के लिये, निम्नलिखित छंद में नायिका का शरीर इतना चमकता-दमकता हुआ बताया गया है कि उसकी उपस्थिति में दीपक जलाने की ज़रूरत ही नहीं है-

   "अंग अंग नग जगमगति, दीपसिखा सी देह,
   दिया बुझाय ह्वै रहौ, बड़ो उजेरो गेह।"

   एक अन्य उदाहरण में वे नायिका की देह की चमक को और अधिक अतिशयोक्तिपूर्ण तरीके से व्यक्त करते हैं। नायिका की चमक का आलम यह है कि उसके घर के आसपास हमेशा पूर्णिमा ही रहती है। अत: पंचांग की मदद से ही तय हो पाता है कि आज कौन सी तिथि है-

   "पतरा ही तिथि पाइए, वा घर के चहुँ पास,
   नित प्रति पून्यौई रहै, आनन ओप उजास।"

2. बिहारी के शृंगार वर्णन की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसका 'अनुभाव-केंद्रित' होना है। अनुभाव का संबंध रस सिद्धांत से है। रस-निष्पत्ति की प्रक्रिया के अंतर्गत जब भावक या दर्शक का स्थायी भाव मंच पर जुटाए गए विभावों, अनुभावों और संचारी भावों की क्रिया-प्रतिक्रिया से परिपाक की स्थिति में आता है तो रस की निष्पत्ति होती है।

   अनुभाव और अभिनय समानार्थक शब्द हैं। अनुभाव का अर्थ है, जो मन में भाव उत्पन्न होने के बाद होता है- तात्पर्य यह कि मन में उत्पन्न भावों की अभिव्यक्ति को ही अनुभाव कहा जाता है। अनुभाव दो प्रकार के हैं- यत्नज और अयत्नज। यत्नज अनुभाव वे हैं जो अभिनेता के प्रयत्न से उत्पन्न होते हैं। इसके अंतर्गत-आंगिक (शारीरिक चेष्टाएँ), वाचिक (वाणी द्वारा अभिव्यक्ति) तथा आहार्य (वेशभूषा इत्यादि) अनुभाव शामिल हैं। अनुभावों का दूसरा प्रकार 'अयत्नज' या 'सात्विक अनुभाव' है। जब अभिनेता किसी चरित्र के अभिनय में इतना खो जाता है कि उसे स्वयं के पृथक् होने का बोध नहीं रहता तो भावनाओं के अनुकरण के कारण ये अनुभाव व्यक्त होते हैं, जिन्हें चाहकर या प्रयासपूर्वक व्यक्त नहीं किया जा सकता। सात्विक अनुभावों के प्रमुख उदाहरण हैं- स्वेद, कम्प, अश्रु, मूर्च्छा, जड़ता इत्यादि।

   बिहारी के काव्य में अनुभावों की सघन उपस्थिति के कुछ ठोस कारण हैं। पहली बात है कि उन्हें दरबारी माहौल के भीतर चमत्कार पैदा करना था। चूँकि दरबार के रसिकों में धैर्य की भारी कमी होती है, इसलिये ऐसे माहौल में प्रबंधकाव्य लिखना लगभग असंभव हो जाता है। दरबार की प्रमुख चुनौती यह होती है कि कम से कम शब्दों में, मुक्तक रचना के माध्यम से रसिकों को आह्लादित कैसे किया जाए? इसलिये बिहारी सिर्फ मुक्तक लिखते हैं और उसमें भी सबसे छोटे छंद दोहे का चयन करते हैं। यदि वे इस छोटे से छंद में विभाव पक्ष को लाने का प्रयास करेंगे तो न तो संदर्भ पूरी तरह स्पष्ट होगा और न ही चमत्कार पैदा करने के लिये ज्यादा स्थान बचेगा। इसलिये, वे विभाव पक्ष से बचते हुए सिर्फ अनुभाव पर ध्यान देते हैं। विभाव तथा अन्य सूचनाओं के प्रति वे इतने उदासीन हैं कि पाठक को खुद उन सूचनाओं की कल्पना करनी पड़ती है। इस वजह से उनके छंदों में अनुभावों की सघनता विस्मित कर देती है। उदाहरण के लिये निम्नलिखित दोहे की पहली पंक्ति में सात शब्द हैं और सातों शब्द एक-एक अनुभाव को व्यक्त करते हैं-

अध्याय
5

कामायनी (जयशंकर प्रसाद)

5.1 कामायनी: कथासार

'कामायनी' की कथा 15 सर्गों में विभक्त है। इन सर्गों के माध्यम से कथा का विकास इस प्रकार हुआ है-

1. **चिंता सर्ग:** इसमें देव सभ्यता के विध्वंस के बाद अकेले बचे मनु की चिंताओं की अभिव्यक्ति है। देव सभ्यता में हर प्रकार का सुख व आनंद उपलब्ध था जो प्रलय के कारण नष्ट हो गया। अतीत की स्मृतियाँ मनु को बार-बार बेचैन करती हैं। चिंता सर्ग की शुरुआत ही उसके दुख से हुई है-

"हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर बैठ शिला की शीतल छाँह,
एक पुरुष भीगे नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह।।"

इस सर्ग में मनु की मूल चिंता यही है कि जीवन अत्यंत नश्वर या नाशवान् है। निम्नलिखित पंक्ति में जीवन की क्षणभंगुरता का भाव साफ दिखता है-

"जीवन तेरा क्षुद्र अंश है व्यक्त नील घन माला में,
सौदामिनी संधि सा सुन्दर क्षण भर रहा उजाला में।।"

2. **आशा सर्ग:** इस सर्ग में सुबह होने के बाद का वर्णन है। इसकी शुरुआत निम्नलिखित पंक्ति से होती है-

"उषा सुनहले तीर बरसती जयलक्ष्मी सी उदित हुई।"

धीरे-धीरे बर्फ पिघलने लगती है और मनु की निराशा भी खत्म होने लगती है। वे प्रकृति के सौंदर्य पर मोहित होकर सुन्दर कल्पनाएँ करने लगते हैं-

"आह! कल्पना का सुन्दर वह जगत मधुर कितना होता।"

3. **श्रद्धा सर्ग:** यह 'कामायनी' का सबसे महत्वपूर्ण सर्ग माना जाता है। इसकी शुरुआत श्रद्धा के आगमन से होती है जो कि गंधर्वों के देश की कन्या है और ललित कलाओं के आकर्षण के कारण हिमालय की ओर आई है। उसे देखते ही मनु को हर्षपूर्ण विस्मय होता है-

"एक झिटका सा लगा सहर्ष, निरखने लगे लुटे से, कौन।"

इसके बाद श्रद्धा के आंतरिक-बाह्य सौंदर्य का सुन्दर चित्रण किया गया है-

"हृदय की अनुकृति बाह्य उदार, एक लम्बी काया उन्मुक्त।"

इसके बाद श्रद्धा मनु को अपना परिचय देते हुए बताती है कि-

"भरा था मन में नव उत्साह, सीख लूँ ललित कला का ज्ञान,
इधर रह गंधर्वों के देश, पिता की हूँ प्यारी संतान।।"

इसके बाद के अंश में श्रद्धा-मनु के मध्य विस्तृत वार्तालाप होता है जिसमें श्रद्धा मनु को अपना जीवन-दर्शन बताती है। वस्तुत: यह वही जीवन दर्शन है जिसे 'प्रत्यभिज्ञा दर्शन' या 'आनंदवाद' कहते हैं और जो प्रसाद की अधिकांश रचनाओं में से उभरता है। श्रद्धा के इस दर्शन को अभिव्यक्त करने वाले प्रमुख कथन इस प्रकार हैं-

"कर रही लीलामय आनंद महाचिति सजग हुई सी व्यक्त,
विश्व का उन्मीलन अभिराम- इसी में सब होते अनुरक्त।।"
"काम मंगल से मंडित श्रेय, सर्ग इच्छा का है परिणाम,
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल, बनाते हो असफल भवधाम।।"
"प्रकृति के यौवन काशृंगार, करेंगे कभी न बासी फूल,
मिलेंगे वे जाकर अतिशीघ्र, आह उत्सुक है उनकी धूल।।"

अध्याय
6

राम की शक्तिपूजा (निराला)

6.1 राम की शक्तिपूजा : कविता

रवि हुआ अस्त : ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
रह गया राम-रावण का अपराजेय समर
आज का, तीक्ष्ण-शर-विधृत-क्षिप्र-कर वेग-प्रखर,
शतशेलसम्वरणशील, नील नभ गर्ज्जित-स्वर,
प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह-भेद-कौशल-समूह
राक्षस-विरुद्ध प्रत्यूह, क्रुद्ध-कपि-विषम-हूह,
विच्छुरितवह्नि-राजीवनयन-हत लक्ष्य-बाण,
लोहितलोचन-रावण मदमोचन-महीयान,
राघव-लाघव-रावण-वारण-गत-युग्म-प्रहर,
उद्धत-लंकापति मर्दित - कपि-दल-बल-विस्तर,
अनिमेष-राम-विश्वजिद्दिव्य-शर-भंग-भाव,
विद्धांग-बद्ध-कोदण्ड-मुष्टि-खर-रुधिर-स्राव,
रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल वानर-दल-बल,
मूर्छित-सुग्रीवांगद-भीषण-गवाक्ष-गय-नल,
वारित - सौमित्र-भल्लपति अगणित-मल्ल-रोध,
गर्ज्जित-प्रलयाब्धि-क्षुब्ध-हनुमत्-केवल-प्रबोध,
उद्गीरित-वह्नि-भीम-पर्वत-कपि-चतु:प्रहर,
जानकी-भीरू-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।

लौटे युग-दल - राक्षस-पदतल पृथ्वी टलमल,
बिंध महोल्लास से बार-बार आकाश विकल।
वानर-वाहिनी खिन्न, लख निज-पति-चरण-चिह्न
चल रही शिविर की ओर स्थविर-दल ज्यों विभिन्न।
प्रशमित है वातावरण, नमित-मुख सान्ध्य कमल
लक्ष्मण चिन्ता पल, पीछे वानर-वीर सकल।
रघुनायक आगे अवनी पर नवनीत-चरण,
श्लथ धनु-गुण है, कटिबन्ध स्रस्त तूणीर-धरण,
दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर, विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार,
चमकतीं दूर ताराएँ ज्यों हों कहीं पार।

अध्याय
7

कितनी नावों में कितनी बार (अज्ञेय)

कितनी नावों में कितनी बार
कितनी दूरियों से कितनी बार
कितनी डगमग नावों में बैठ कर
मैं तुम्हारी ओर आया हूँ
ओ मेरी छोटी-सी ज्योति!
कभी कुहासे में तुम्हें न देखता भी
पर कुहासे की ही छोटी-सी रुपहली झलमल में
पहचानता हुआ तुम्हारा ही प्रभा-मंडल।
कितनी बार मैं,
धीर, आश्वस्त, अक्लांत-
ओ मेरे अनबुझे सत्य! कितनी बार.....
और कितनी बार कितने जगमतग जहाज़
मुझे खींच कर ले गए हैं कितनी दूर
किन पराए देशों की बेदर्द हवाओं में
जहाँ नंगे अंधेरों को
और भी उघाड़ता रहता है
एक नंगा, तीखा, निमर्म प्रकाश-
जिसमें कोई प्रभा-मंडल नहीं बनते
केवल चौथियाते हैं तथ्य, तथ्य-तथ्य-
सत्य नहीं, अंतहीन सच्चाइयाँ....
कितनी बार मुझे
खिन्न, विकल, संत्रस्त-
कितनी बार!

नोट:

'कितनी नावों में कितनी बार' सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयायन' अज्ञेय की वर्ष 1962 से 1966 के बीच रचित कविताओं का संकलन है। इसके लिये अज्ञेय जी को वर्ष 1978 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गाय था। वर्ष 1911 में कुशीनगर (उत्तर प्रदेश) में जन्में अज्ञेय जी के इस संग्रह के अंतर्गत लगभग सभी कविताओं में अज्ञेय जी ने अपनी अखंड मानव-आस्था को भारतीयता के नाम से प्रचलित आवाक् सहस्यवादी से वैसे ही दूर रखा है, जैसे प्रगल्भ आधुनिक अनास्था के साँचे से कैसे हमेशा दूर रखता रहा है। उल्लेखनीय है कि मनुष्य की गति एवं उसकी नियति की ऐसी पकड़ जो इन कविताओं में देखने को मिलती है, जो अन्यत्र दुर्लभ है। इस संग्रह में 'उधार', 'सध्या- संकल्प', 'प्रात:संकल्प' कितनी

अध्याय
8

कुरुक्षेत्र (रामधारी सिंह दिनकर) पहला सर्ग

8.1 दिनकर: एक परिचय

छायावाद के समय से ही हिन्दी कविता की एक धारा राष्ट्रीय जन-जागरण की थी जिसका प्रतिनिधित्व माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', भगवतीचरण वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि कर रहे थे। इसे और भी तीव्र एवं प्रखर बनाने वाले कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' हैं, जिन्होंने आरम्भ से ही ओजस्विता एवं तेजस्विता से परिपूर्ण कविताएँ लिखीं।

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने सर्वप्रथम गुप्त जी के 'जयद्रथ-वध' के अनुकरण पर 'प्रण-भंग' काव्य का निर्माण किया था और उसके बाद 'हुंकार', 'रसवंती', 'द्वन्द्वगीत', 'रेणुका', 'सामधेनी', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्वशी', 'परशुराम की प्रतीक्षा', 'बापू', 'इतिहास के आँसू', 'सीपी और शंख' आदि काव्यों की रचना की जिनमें उन्होंने आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक समस्याओं की अपेक्षा देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए क्रान्ति एवं विद्रोह का सिंहनाद करते हुए जन-जागरण की भावना को ही सर्वाधिक महत्व प्रदान किया तथा स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त देश में व्याप्त राजनीतिक समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये।

'हुंकार' कवि दिनकर की पहली रचना है, जिसमें विप्लव और विद्रोह की आग बरसाने वाली कविताएँ संकलित हैं। कवि का यही ओजस्वी स्वर 'रसवंती', 'द्वन्द्वगीत', 'रेणुका', सामधेनी', 'इतिहास के आँसू', 'धूप और धुआँ' आदि काव्य-संग्रहों में विद्यमान है। इन सभी कविताओं में कवि ने बड़ी दृढ़ता एवं गम्भीरता के साथ कर्म, उत्साह, पौरुष एवं उत्तेजना के गीत गाये हैं और जन-जीवन में प्राण फूँकने का कार्य किया है। कवि का यही उन्मुक्त स्वर 'कुरुक्षेत्र' प्रबन्ध-काव्य में सुनाई पड़ता है, जहाँ कवि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र से भी ऊँचा उठकर युद्ध जैसी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या के समाधान में प्रयत्नशील दिखाई देता है। कवि की यही ओजस्वी भावना 'रश्मिरथी' प्रबन्ध-काव्य में महावीर कर्ण के उस उपेक्षित एवं तिरस्कृत जीवन को अंकित करने में अभिव्यक्त हुई है, जो कलंकित मानवता का मूक प्रतीक बनकर हमारे सामने खड़ा है।

'रश्मिरथी' के उपरान्त कवि दिनकर की कविताओं के कई संकलन निकले, जिनमें से 'दिल्ली', 'नीम के पत्ते', 'नीलकुसुम', 'चक्रवाल', 'कविश्री', 'सीपी और शंख', 'नये सुभाषित' तथा 'परशुराम की प्रतीक्षा' प्रसिद्ध हैं। इन सभी संकलनों की कविताओं का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि कवि ने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त देश की स्थिति पर भली प्रकार दृष्टिपात किया है और जन-जीवन में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विषमताओं का चित्रण किया है। उदाहरण के लिए परशुराम की प्रतीक्षा में वह दिल्लीवासी नेताओं को ललकारता हुआ कहता है-

"सकल देश में हालाहल है, दिल्ली में हाला है।
दिल्ली में रोशनी, शेष भारत में अँधियारा है।
मखमल के परदों के बाहर, फूलों के उस पार/
ज्यों का त्यों है खड़ा आज भी मरघट-सा संसार।"

8.2 कुरुक्षेत्र का युद्ध दर्शन

कुरुक्षेत्र में मुख्यत: दिनकर का युद्ध दर्शन ही व्यक्त हुआ है। युद्ध के संबंध में प्राय: दो प्रकार के दार्शनिक विचार मिलते हैं। कुछ दार्शनिक युद्ध को काम्य और ज़रूरी मानते हैं जैसे नीत्शे और हीगेल। इसके विपरीत, कुछ विचारक युद्ध को पूर्णत: अनुपयोगी मानते हैं जैसे- बुद्ध, महावीर और गांधी। कुरुक्षेत्र में दिनकर एक तरह से मध्य मार्ग लेकर चले हैं जिसका सारतत्व है कि युद्ध बुनियादी रूप से अकाम्य है किन्तु बुराई से लड़ने के लिए किया गया युद्ध ज़रूरी और नैतिक

अध्याय
9

मुक्तिबोध- अंधेरे में (भाग-1)

जिन्दगी के...
कमरों में अँधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार;
आवाज पैरों की देती है सुनाई
बार-बार....बार-बार,
वह नहीं दीखता... नहीं ही दीखता,
किन्तु वह रहा घूम
तिलस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक,
भीत-पार आती हुई पास से,
गहन रहस्यमय अन्धकार ध्वनि-सा
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक,
और मेरे हृदय की धक-धक
पूछती है--वह कौन
सुनाई जो देता, पर नहीं देता दिखाई !
इतने में अकस्मात गिरते हैं भीतर से
फूले हुए पलस्तर,
खिरती है चूने-भरी रेत
खिसकती हैं पपड़ियाँ इस तरह--
खुद-ब-खुद
कोई बड़ा चेहरा बन जाता है,
स्वयमपि
मुख बन जाता है दिवाल पर,
नुकीली नाक और
भव्य ललाट है,
दृढ़ हनु
कोई अनजानी अन-पहचानी आकृति।
कौन वह दिखाई जो देता, पर
नहीं जाना जाता है !!
कौन मनु ?

बाहर शहर के, पहाड़ी के उस पार, तालाब...
अँधेरा सब ओर,
निस्तब्ध जल,
पर, भीतर से उभरती है सहसा
सलिल के तम-श्याम शीशे में कोई श्वेत आकृति
कुहरीला कोई बड़ा चेहरा फैल जाता है
और मुसकाता है,

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation